# इक्कीसवीं सदी की विश्वविद्यालय

इनसान की ज़िंदगी नश्वर है। चींटी की उतनी ऐसी ज़िंदगी में कुछ न कुछ कर दिखाने का उसका वह महत्वाकांक्षा की कोई सीमा नहीं। नीचे मिट्टी से लेकर ऊपर सितारों तक लंबी वह ऐसी महत्वाकांक्षा बिना कोई झूड से नहीं आकर टूटा है - लेकिन टूटा है कुछ-न-कुछ नए सीखने का उसका वह ज्वलन से, वो ज्वलन जिससे हम 'इनसान' कहलाने में हर मतलब से काबीलियत हुआ है। बस इनसान के ही नहीं बदला गया है, साथ-साथ बदल गया है..., बदला दिया गया है उसका मिट्टी भी.., जहाँ से सभी चीज़ों का शुरुवात हुआ था। ज्ञान के पीछे की वह दौड़ कल या आज नहीं शुरू हुआ था, ये हम बिना किसी तकलीफ से कह सकते हैं। लेकिन आज, वह ग्यान पाने की तरीके बदल गये हैं, और वक्त के साथ-साथ कुछ चीज़ हम खो चुका है, जिनमें कुछ फैदे के थे, और कुछ नहीं। भारतीय विश्वविद्यालयों का भी कुछ ऐसे ही हाल हुआ है..। विश्वविद्यालयों के बारे में बात करने से पहले, कोई कैसे ग्यान के प्रारंभ को भूल सकते हैं? इसे कुछ ज़्यादा बेहतर तरीके से जानने के लिए, हमें इतिहास के पन्नों को मोड़ना तो बनता ही है।

ज्ञान और विज्ञान पाने की खोज हज़ारों सालों पहले ही शुरु हुआ था, इसमें कोई सवाल नहीं, ना कि उसकी ज़रूरी है। "उसका नज़र उसका किताब था, दिल उसकी कलम और खुद माँ प्रकृति उसकी विश्वविद्यालय बनी है। इसी वजह से तो वह तूफान के बीच बिना अचले वह दीप को जलाकर रखा - जो की महत्वाकांक्षा के मिसाल पर हम मानव जाती ~~की अ~~ के आगे रखा हुआ है। वह महत्वाकांक्षा उस विद्या से उगकर आया है, जिससे उसे वह दीक्षणा मिली की वह खुद आग बनाना सीखा, पहिये से कॉयिनाब के खोज पर निकले।

भारत खुद एक विश्वविद्यालय था, जो कि है, जो कि हमें पता चल जाते हैं इतिहास के पन्नों से। यहाँ की मिट्टी-पाँथो से लेकर पानी-पाँथे भी कुछ न कुछ नया सिखा सकते हैं। भारतीय ऐतिहास इसके सबसे बड़े मिसाल है। गुरुकुल विद्यालयों से लेकर आर्य वह ऐसे परंपरा है हमें विश्व को दिखाने को, जो हर कोने से एक विश्वविद्यालय बुलाने की काबीलियत है। बस भारत में ही नहीं, बल्कि पूरे दुनिया में कुछ इसी वक्त समान दृष्टिकोण की विकास हुई। ग्रीस की 'एथेनस' और चीन की प्रथम तरीकें उस बढ़ते हुए महान सागर की ओर उंगली बढ़ाया था, जहाँ एक बिलकुल नए दुनिये के किस्से की शुरुवात की आंदोलन मच रहा था।

इक्कीसवीं सदी की महासन्धि दुधी पर आकर रुकने वाले आज की नवीन समाज में आखिर देखे जाए तो सारे चीज़ें उल्ट-पुल्ट होने की दौड़ पर निकले हुए हैं। हमारा भारत आज भी उस बीमार से बेहतर हो रहा है, जो कि करीब चार-सौ साल पहले शुरू हुआ था और ~~अधिवेशवाद~~ उपनिवेशवाद बुलाया गया था। साथ-साथ ज़हर के नाम पे जात-प्रथा भी एक हद तक मौजूद था, जो चीज़ों का 'दुध-का-दुध और पानी-का-पानी' कर रहा था। ~~लेकि~~ लेकिन पहले जो महत्वाकांक्षा के बारे में हम बात किये थे, वो यहाँ ज़रूर मदद में आया, आखिर हम महान भारत-मिट्टी में आज जो चल पा रहा है बिना किसी बड़े दिक्कत से। जात-प्रथा के खिलाफ़ अपने नज़र की कठोरे से मारे डॉ. बीमराव अंबेदकर जी और शस्सियों को काटने में अपने ज़िंदगी को खोने तक तैयार हुआ भगत सिंग से लेकर और कितना बड़ा विश्वविद्यालय देखे और बिना देखे हर किसी भारतीय नागरिक के दिल पर है, हिसाब नहीं। यह ऐसे महारथियों से बने गए हैं हम हर भारतीय के विश्वविद्यालय, जिसके कारण हर बच्चा आज ~~से~~ असल के विद्यालय साथ-साथ "आज के विश्वविद्यालय" जा पा रहे हैं। यह उस महत्वाकांक्षा की नतीजा है, जिससे आज का समाज का नींव ही बनाया गया है।

64-ാമത് കേരള സ്കൂൾ കലോത്സവം തിയ്യതി..... പ്രോഗ്രാം കമ്മിറ്റി

Item Code: 948 Participant Code: 031

भारत के विश्वविद्यालयों की शुरुवात और बचावत के किस्से कुछ ऐसे साबित होता है। ए.ई.टी, एन.ई.टी, एथमस; आदि आज के कुछ कुछ विश्वविद्यालयों का उपस्थिति भी वह एहसास पर बने गया है।

आज, सभी में कुछ-न-कुछ विदेशी है। क्या बोलूं, पहने हुए कपड़े में विदेशी है, कहे गए बातों में कुछ लोगों में विदेशी और कुल मिलाकर देखे जाए तो भी कई लोगों को विदेशी बुलाए जाने में ज़्यादा गलत की बात नहीं है। सभी में ~~आज~~ विदेशी आशयों का प्रभाव पड़ गया है। भारत के परंपरा और संस्कृति में भी इसका प्रभाव ज़रूर है। "विश्वगुरु" नाम से पहचाने चाहे हम "विदेशी गुरु" कब बने?

एक विश्वविद्यालय बस वही नहीं है जिससे एक विद्यार्थी चार दीवारों के बीच पंखों के सहारे हवा खाकर पी.एच डी और आदी चीज़ों का हासिल करें, पर लेकिन उसका एक और पहचान है जो हर एक आम आदमी समझ पाते है - मानविकता की विश्वविद्यालय। इनसान को इनसान बनानेवाले इनसानियत खो-खोकर जा रहे है हमारे ज़िंदगियों से, और कोई भी यह बात से सहमत नही करेगा की विदेशी प्रभाव इसका वजह नहीं है।

जब बनता है आखिर कोई चीज़ विदेशी? एक चीज़ या सोच तब विदेशी बनता है जब उसका खुद का आत्मा खो दिया जाता है। लेकिन क्या हम भारत जो खुद महान विश्वविद्यालय है, संपूर्ण है?, जवाब होगा बिलकुल भी नहीं। अगर ध्यान से देखे जाए तो हमारे दीवारों में भी छेद है...। हम एक समाज के नाम पर तब ही बढ़ेंगी जब ये छेदों को सही तरह बंद करें। विदेशी से बस ये मतलब नहीं है कि सब कुछ जो भारत से बाहर है वो सही नहीं है, बल्कि खुद हम नागरिक के अंदर भी विदेशी जन्म ले सकते है। वह एक सोच होगा, एक नज़र हो सकता है और हो सकता है एक शब्द। हमारा जीत तभी होगा जब हम इस सफर पूरा दम से आगे तक बढ़े।

आज एक ऐसा दिन पर हम आकर पहुँचा है जब हमारे भारत के बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों से पढ़े-लिखे लोहे आसानी से विदेशी चमक के आगे फँसकर खुद-का पहचान खो डालते है। "विश्वविद्यालय" का असल का सरल मतलब कितने सरलता से हम खो पा रहे है...।

64-ാമത് കേരള സ്കൂൾ കലോത്സവം
തീയതി.....................
പ്രോഗ്രാം കമ്മിറ്റി

- जैसे की प्रसिद्‌ध अमेरिकन रूसवेल्ट की कहना है, "हम ही दुनिया है, दुनिया खुद हम है"; खुद हर एक व्यक्ति विश्वविद्‌यालय से कहा जा सकता है। हर किसी व्यक्ति को सौ चीज़ सिखाने को होंगे, साथ-साथ हज़ार चीज़ खुद से सीखने को। जब तक वह बड़े कागस में विदेशी छेद नही पहुँचेगा, तब तक वह "विश्व" की और विकसित होकर ऊपर चाँद तक उठेगा। क्योंकि आज हमें बांदने को रस्सी नहीं मौजुद है, लेकिन है वह आत्मसंवेदना, जिससे हज़ार दीवारें को हम खींच सकते हैं, जिससे हर एक व्यक्ति के आँख में ज्वलन ला सकते हैं।

हमारा देश आज भी भागिक अंधकार के फँसी पर चढ़ाया गया है। लोगों की सोचने की तरेके में गलती आ गया है, कई लोग सोचना ही बंद कर दिये गये। दूसरे वह महत्वाकांक्षा को दर्द पहुँचेगा जो विश्वविद्‌यालय के नींव को ऊँचा किया है, आगे बढ़ाया है। विदेशी के रूप में भ्रष्टाचार से लेकर क्या-क्या नहीं है जो हमारे वह परंपरा को ~~चोट~~ चोट पहुँचा सकते हैं, जो विश्वविद्‌यालय का सही आकार की धुलाई कर रहे हैं, सकते हैं।

- एक भारतीय नागरिक होने के नाते, हमें यह चीज़ का देखभाल ज़रूर करना चाहिए की हम वह विश्वविद्यालय के आवाज़ को मिट्टी में नहीं गिरने दे, और अपने-अपने हाथों से यह ~~कोशिश~~ कोशिष होना चाहिए कि हम वह नाम फिर को पूरे दुनिया के आगे यश से पेश कर ~~सकते~~ सके। तभी एक नवीन समाज होने में हमारी असली प्रगति होगी॥